ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 77-79

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-03, No.-II, Issues-15YEAR-2014 Extra

ग्रामीण क्षेत्र में सत्ता संरचना को निर्धारित करने वाले सामाजिक कारक का समाजशास्त्रीय अध्ययन

रमेश कुमार
शोध अध्येता– समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया (बिहार) भारत

सारांश : *प्राचीन काल से ही भारत में ग्राम पंचायतों का महत्व है । गॉवों में ग्राम पंचायतें शुरू से ही प्रशासन का अंग रही है । परम्परागत रूप से ग्राम पंचायत एक या आसपास के गॉवों के पाच सम्मानित व्यक्तियों की इकाई थी जिसका कार्य समाज में सुधार एवं नियंत्रण है । वर्तमान में गॉव पंचायतों के स्थान पर पंचायती राज के द्वारा नयी पंचायतों के व्यवस्था की गई है । गॉव में इस नवीन व्यवस्था के कारण ग्रामीण शक्ति संरचना, नेतृत्व गुटबन्दी तथा दलीय प्रणाली के लिए नये आयामों का जन्म हुआ है । ग्रामीणों के सामाजिक जीवन में मूल्यों अथवा आदर्शो का बड़ा महत्व है । इन सामाजिक मूल्यों के आधार पर हम व्यक्ति के व्यवहारों का निर्धारण करते हैं । यह मूल्य पुरानी पीढ़ी से नई पीढ़ी को हस्तांतरित होती रहती है ।*

कुंजीभूत शब्द– प्राचीन काल, पंचायतों, प्रशासन, परम्परागत, ग्राम पंचायत, सम्मानित, नियंत्रण, वर्तमान ।

जातियों के परम्परागत इतिहास को बताने के पश्चात प्रस्तुत शोध लेख में उसकी भूमिका की विवेचना आवश्यक हो जाती है। उसी को दृष्टि में रखते हुए सत्ता संरचना में जाति की भूमिका का विवेचना किया जा रहा है। भारतीय ग्रामीण समाज में सत्ता का मुख्य केन्द्र बिन्दु जातियां रही है जो आज भी कुछ परिवर्तनों के साथ विद्यमान है। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण समाज की पूरी आचार संहिता, अर्थसंहिता इस प्रकार समाहित है कि इसने समाज के सभी अंगों को अपने आलिंगन पाश में बांधे हैं और साथ ही साथ लोग इसे अपने गले लगाये हुए हैं। भारत का प्रत्येक व्यक्ति सर्वप्रथम एक जाति या समुदाय का सदस्य होता है, जिसके अनुसार उसे समाज में एक स्थान या पद स्वयं प्राप्त हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति जन्म से किसी जाति या समुदाय में जन्म लेने के कारण समाज में जो स्थान प्राप्त कर लेता है, उसी के अनुरूप उसकी कार्यप्रणाली, पेशा, पर्दा स्थिति समाज में प्राप्त सुविधायें–असुविधायें, पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन, धार्मिक एवं सांस्कृतिक, प्रतिमान सम्पति के ऊपर अधिकार या अनाधिकार, प्रशासनिक अधिकार तक की सीमा का निर्धारण हो जाता है। इस प्रकार भारतीय ग्रामीण समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति का समाजीकरण उसके जातीय संस्कारों के ही अनुरूप होता है। यही कारण है कि प्रत्येक ग्रामीण जब सत्ता के लिए राजनीति में आता है तो वह अपने जीवन के तौर–तरीकों एवं वैचारिक प्रवृतियों को भी अपने साथ लाता है।

भारतीय ग्रामीण कृषक समुदाय की संरचना के निर्धारकों में नातेदारी, जाति तथा क्षेत्र प्रमुख है। एक व्यक्ति का सम्बन्ध एक परिवार से होता है। वह एकांकी हो अथवा संयुक्त। इसी प्रकार परिवार का सम्बन्ध सम्बन्धियों के एक बड़े समूह से होता है, जो आपसी सम्बन्धों से जुड़े होते हैं। कुछ ऐसे भी उदाहरण पाये जाते हैं, जिसमें उप–जातीय समूह समाज रक्त सम्बन्ध के पाये जाते हैं। अहिन्दू धार्मिक समूह जो गांवों में रहते हैं, उन्हें एक अलग जाति के रूप में कार्य करते हुए देखा गया है। बहुत सी हिन्दू जातियां प्राचीन वर्ण व्यवस्था में वर्णित चार वर्णों में से किसी के अन्तर्गत या जाती है। एक व्यक्ति तथा उसका परिवार गांव से ही सम्बन्धित होता है, जिसमें विभिन्न जातियों के लोग रहते हैं। गांव स्वयं पड़ोसी से सम्बन्धित होते हैं। साथ ही वे धर्म तथा राष्ट्र के अंग माने जाते हैं।

कृषक समाज को संगठित करने में प्रणाली एक मात्र आधार है और यह प्रणाली बहुत कुछ नातेदारी तथा क्षेत्रीय इकाई को प्रभावित करती है। इस व्यवस्था द्वारा समाज का खण्डात्मक विभाजन होता है। इसके विभिन्न खण्ड सूक्ष्म अवलोकन द्वारा अलग–अलग देखे जा सकते हैं। जातिगत विभाजन ईश्वरीय आधार पर उच्च स्तरीय पदक्रम में देखे जा सकते हैं। प्रत्येक खण्ड को परम्परा के आधार पर परिभाषित किया गया है तथा इन्हें स्थायी माना गया। अन्तः समूह सम्बन्ध जातीय संरचना एक निश्चित सिद्धान्त के तहत कार्य करती है। पदक्रम तथा सामाजिक दूरी की अभिव्यक्ति नीतिगत नियमों के आधार पर होती है, जिनका आंकलन शुद्धता को बनाये रखने के लिए किया जाता है। इस व्यवस्था में विवाह तथा शारीरिक सम्पर्क नियमों द्वारा निर्देशित होते हैं जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि जाति के बाहर वैवाहिक सम्बन्ध परम्परा द्वारा अमान्य होते हैं। यहा यह भी उल्लेखनीय है कि एक जाति

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-03, No.-II, Issues-15YEAR-2014 Extra

किन जातियों से विभिन्न प्रकार के खाद्यान्नों को ग्रहण कर सकती है। विभिन्न जातियों के बीच होने वाली दैनिक अन्तःक्रियायें भी जातीय नियमों के अनुसार निर्देशित होती है। कुछ जातियों को स्पर्श करना निशिद्ध है। इसी प्रकार कुछ लोगों के साथ शारीरिक सम्पर्क स्थापित करना भी कुछ विशिष्ट दशाओं में वर्जित है। जातियां विस्तृत रूप से व्यवसाय या पेशे के चुनाव को निर्धारित करती है। विभिन्न जातियों के आचरण एवं व्यवहार सम्बन्धी निश्चित मान्यताओं और अपेक्षायें होती हैं। उदाहरण के लिए धोने, नहाने सम्बन्धी जन–व्यवहार, वस्त्र तथा भाषा के सम्बन्ध में जातिगत अपेक्षायें होती हैं।

विगत वर्षों में नई स्थितियों तथा दशाओं में जहां सामूहिक निर्णय तथा सामूहिक क्रिया की आवश्यकता हुई, जाति की शक्ति तथा संगठन का प्रदर्शन हुआ। अनेक स्थानीय, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर के चुनाव जातिगत आधार पर लड़े गये हैं। क्योंकि जीवन के क्षेत्र में क्षैतिजीय सम्बन्धों के आधार पर विभिन्न गांवों के लोग एक साथ कार्य करते हैं। जाति की स्थानीय तथा क्षेत्रीय संगठन समितिया होती हैं, जो जाति के नियमों तथा रिवाजों और परम्पराओं को क्रियाशील बनाने के संदर्भ में अधिकाधिक रूप से प्रभावशाली रहती है। भारतीय कृषक सामाजिक संरचना में सामाजिक संगठन की मूल इकाई संयुक्त परिवार रहे हैं परन्तु आधुनिक संदर्भ में एकांकी परिवार तथा छोटे संयुक्त परिवारों का अस्तित्व दिखाई पड़ता है। गांव पर किये गये हाल के अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि विस्तृत संयुक्त परिवार बहुत ही कम संख्या में हैं और थोड़े–बहुत पाये गये हैं, वे केवल उच्च जाति तक ही सीमित रहे हैं, जिनमें प्रमुख पुरोहित परिवार, व्यापारी एवं कृषक जाति के लोग हैं। उत्तरी भारत के मैदानी भागों में यह पाया गया है कि एक घर में अनेक सम्बन्धी रहते हैं जो एक परिवार के रूप में रहते, वरन् एक भिन्न केन्द्रीय परिवार के रूप में रहते हैं और प्रत्येक का अपना अलग–अलग चूल्हा होता है। इस प्रकार सामाजिक संरचना की इकाई के रूप में कृषक समाज में जाति और रक्त की सीमाओं को तोड़ दिया है और अपनी संरचना में विभिन्न जाति तथा असम्बन्धित परिवारों को सम्मिलित कर लिया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्रामीण सामाजिक संरचना के मूल आधार जाति व्यवस्था एवं कृषक है, जबकि आर्थिक संरचना में भी मुख्य स्थान कृषकों का ही है। भारतीय ग्रामीण संरचना की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि यहां पर जाति की स्थिति एवं कृषकों (जाति के आधार पर) के मध्य एक प्रत्यक्ष सह–सम्बन्ध है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि एक वहां पर बड़े काश्तकार ऊँची जाति के, मझौले किसान मध्यम जाति के तथा छोटे कृषक निम्न जाति के प्रायः सदस्य हैं।

ग्रामीण विषमता– आदर्शवादी विचारक ग्रामीण जीवन मे निहित विषमताओं का प्रमुखता से विवेचना करते हैं, परन्तु उनके वैचारिक दृष्टिकोण मूल्यों परम्पराओं एवं व्यवहार प्रतिमानों के आधार पर प्रस्थापित सामाजिक वैज्ञानिक और मूलतः समाजशास्त्रियों द्वारा ग्रामीण जीवन की विशमताओं के स्वरूप और प्रकारों पर जो विचार प्रस्तुत किये गये हैं उनमें सभ्यता परिलक्षित नहीं होती। ग्रामीण जीवन की स्थितियों के विवेचन हेतु अलग–अलग अवधारणाओं जैसे सामाजिक विषमता, सामाजिक वर्ग और सामाजिक स्तरीकरण का उपयोग किया जाता है।

मानव समाज में निहित विषमतायें स्वभावगत ही नहीं अपितु परिस्थितिगत होती है। आन्द्रे वेत्तेई (1959)। सामाजिक परिस्थितियों में निहित भिन्नतायें विषमता को जन्म देती है।

सामाजिक स्तरीकरण– सामाजिक विषमता का व्यावहारिक प्रतिरूप सामाजिक स्तरों के रूप में प्रकट होता है। भारतीय समाज में विभिन्न वर्गो, पदनामों और जातियों की शक्तियां उनमें निहित है। जाति और पद नाम की अपेक्षा वर्गों के रूप में स्तरीकृत समाज अधिक जटिल होता है। वर्गों की संरचना जातीय अनुबन्धों या मदों के समुच्चय के रूप में भी हो सकती है। परन्तु आर्थिक आधार पर स्तरीकरण वर्ग अत्यधिक शक्तिशाली भूमिका का निर्वाह करते हैं।

उद्देश्य– 1. जतिगत आधार पर किस प्रकार सामाजिक सत्ता को प्रभावित करता है और सामाजिक सत्ता का प्रयोग किन उद्देश्यों के लिए किया जाता है।
2. सत्ता–संरचना में भूमिका का अध्ययन करना ।
3. आयु, लिंग, शिक्षा, मासिक आय, वैवाहिक स्थिति, निवास स्थान, पारिवारिक स्वरूप आदि की जानकारी प्राप्त कर उनकी सत्ता संरचना में भूमिका का अध्ययन करना ।
4. व्यवसायिक गतिशीलता में व्यक्ति की मानसिकता को सत्ता–संरचना में परिवर्तन की भूमिका का अध्ययन करना।
5. लोकतात्रिक मूल्यों का सत्ता–संरचना में भूमिका का अध्ययन करना ।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध–लेख में द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से समाजिक, सैद्धांतिक विश्लेषणात्मक, तुलनातमक एंव नवीन व्यवहारिक पद्धतियों को अपनाते हुए शोध–लेख को मौलिकता प्रदान करने का प्रयास किया गया है। इस शोध लेख हेतु ग्रामीण क्षेत्र में सत्ता संरचना को निर्धारित करने वाले सामाजिक कारक से संबंधित पुस्तकालयों इंटरनेट एंव शोध संस्थानों आदि में उपलब्ध

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-03, No.-II, Issues-15YEAR-2014 Extra

साधनों के अलावा मध्यकालिन तथा आधुनिक संदर्भ–ग्रंथों से एकत्र किया गया है । इन संदर्भ पर आधारित पुस्तकों के अलावा विभिन्न आयोगों के प्रकाशनों आत्मलेखो, समाचार पत्र–पत्रिकाओं, राजनीतिक दलों के घोशणापत्रों एवं राजनेताओं के भाषण इत्यादि के लेखन सामाग्री संग्रहित कर विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष– निष्कर्ष के रूप यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र में सत्ता संरचना को निर्धारित करने वाले सामाजिक कारक की संरचना के संबंध में विचारकों में मत–वैमस्य है। कुछ विचारकों ने कृषकों को रूढ़िवादी, आत्मकेन्द्रित, प्रतिक्रियावादी, प्रगतिवादी तथा विद्रोहहीन माना है और समस्त कृषक समाज को एक विशिष्ट ईकाई के रूप में देखते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मजूमदार, डी.एन. एण्ड अदर्सः इन्टर कास्ट टेन्सन देसाई, ए.आर. द्वारा संकलित रूरल सोशियोलॉजी इन इंडिया, पृ.338
2. वेत्तेई आन्द्रेः कास्ट क्लास एण्ड पावर ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस बम्बई 1969
3. थार्नर और थार्नर : द अग्रेरियन प्रॉस्पेक्ट इन इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 71
4. मॉर्डक, जी.पी. सोशल स्ट्रक्चर, मैकमिलन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, 1949, पृ.66
5. वही, पृ. 199
6. जॉनसन, एच. एच., सोशियोलॉजी सिस्टमेकिटक इन्ट्रोडक्शन, पृ. 48

*****